चिमनियों के साये तले

इन भट्ठों की ऊंची–ऊंची चिमनियों से उठता हुआ धुऑ बता रहा है कि नीचे आग जल रही है। नीचे सचमुच आग जल रही है। वहॉ दो किस्म की आग हैं। एक, जिसका धुऑ हम देख पा रहे हैं,लेकिन एक और किस्म की आग है जो पिछले कई बरस से धधक रही है। जिसका धुऑ दूर से नजर नही आता है। उसे देखने के लिए पास जाना पडता है। बियाबान में चल रहे इन ईंट भटठों में हज़ारों हज़ार ज़िंदगियॉ बसर कर रही हैं। हर एक भटठे की चिमनी के साये तले एक भरा–पूरा, छोटा सा गॉव मिल जाएगा आपको। आज की अपनी बातों का ताना बाना इन्हीं जिन्दगियों के इर्द गिर्द है, जो एक बदलाव की दास्तान कहता है।

सन् 1959 की बात है।देश में 'विकास का नेहरू माडल' चरम पर था। कानपुर मे भी आई.आई.टी यानी भारतीय प्रौधोगिकी संस्थान के निर्माण की योजना आकार ले रही थी। मुख्य शहर से 16 किलोमीटर दूर स्थित कुछ गॉवों– नानकारी, लोधर,बारासिरोही और नारामऊ– के बीच पडने वाली तकरीबन 1055 एकड उपजाउ खेती की जमीन को अधिगृहित किया जा रहा था। जिसका विरोध करते हुए इन गॉवों के किसानों ने एक चिटठी लिखी थी, जिसे उन्होने तत्कालीन नेता 'मनीराम जी' के हाथों प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू जी तक पहॅुचाया था। तब, नेहरू जी का जवाब था ' क्या आप लोग नही चाहते हो कि कानपुर भी खुशहाल बनें ?'

खैर, खुशहाली लाने का नेहरू जी का सपना सच हुआ। आई.आई.टी. कानपुर बना और तकनीकी विकास मे योगदान देने के लिए देश विदेश में इसका खूब नाम हुआ। बीस बरस बाद, यानी सन् 1980 में जब यह संस्थान अपने स्थापना की 20वीं वर्षगॉठ मना रहा था तब एक समारोह में 'मनीराम जी' के पुत्र विष्णु शर्मा जी ने एक सवाल पूछा। उनका सवाल था कि इतने वर्षों में आई.आई.टी. ने अपने आस पास बसे गॉवों के लिए क्या किया हैं ?

औपचारिक रूप से संस्थान ने अपने आस पास के इलाकों के विकास के लिए क्या किया है इसपर सचमुच प्रश्नचिन्ह हैं,लेकिन एक सच्चाई यह भी है कि संस्थान के कई शिक्षकों, छात्रों और कर्मचारियों ने अपने जीवन का बहुमूल्य समय इन इलाकों में बदलाव लाने के लिए समर्पित कर दिया है। मेरा ये लेख उन सभी साथियों को समर्पित है जिन्होने हक,इंसाफ और इंसानियत की इस मुहिम मे अपना योगदान किया।

आई.आई.टी बनने की प्रक्रिया जब से शुरू हुई , तभी से बहुत सारी बिल्डिंगे बनाने का काम भी बदस्तूर जारी है। कभी भी जाइए, आपको यहॉ निर्माण कार्य चरम पर मिलेगा। बडे भवन, कक्षाऍ, प्रयोगशाला,हास्टल, स्वीमीगं पूल, खेल का मैदान, पार्क, हवाई अडडा....और न जाने क्या क्या, हमेशा कुछ न कुछ बनता मिलेगा। इस काम मे लगे प्रवासी मजदूरों की झोपडपटटी भी बरसों बरस लगी रहती है। इनके अलावा घरों और बागीचों मे काम करने वाले, रिक्शा खींचने वाले और ठेले पर फल सब्जी बेंचने वाले लोगों की भी अच्छी खासी संख्या है। कुल मिलाकर दो तरह की जिन्दगियॉ इस छोटे से कैम्पस में आप हमेशा देख सकते हैं। एक जिनके पास 'सब कुछ' है और दूसरे जो 'कुछ' की तलाश में यहॉ अपना पसीना बहा रहे हैं।

सरकारी कर्मचारियों और संस्थान के बच्चों की शिक्षा के लिए दो स्कूल हैं। एक केन्द्रिय विद्यालय तथा दूसरा कैंपस स्कूल। कुछ साल पहले तक सभी कर्मचारियों के बच्चे इन्ही दोनो स्कूलों में जाया करते थें। वे पॉचवीं तक की पढाई कैंपस स्कूल में करते थे और 6वीं से 12वीं तक पढने के लिए केन्द्रिय विद्यालय में जाते थें। आज ऐसा नही हैं। उच्च आय वर्ग के लोग अब अपने बच्चे यहॉ नही भेजते हैं। रोज सुबह बडी बडी बसें आती हैं और उनमें बैठकर बहुत सारे बच्चे शहर के नामी गिरामी स्कूलो में जाते हैं। अब इन स्कूलों में आपको अधिकांशतः निम्न तथा मध्यम आय वर्ग के कर्मचारियों के बच्चे ही मिलेगें।

जैसा कि मैने उपर कहा, कि कैंपस में 'कुछ' की तलाश में आई हुई तमाम जिन्दगियॉ बसर करती हैं। घरों में काम करने वाले नौकर, रिक्शा चलाने वाले,माली का काम करने वाले, ठेले पर सामान बेंचने वाले,छोटे दुकानदार और निर्माण कार्य में काम कर रहे हजारों प्रवासी मजदूर। ये भी इसी कैंपस का हिस्सा हैं, लेकिन इनके बच्चों के पढने का कोई इंतजाम नही था।कुछ संवेदनशील लोगों के प्रयासों से इन तबकों के बच्चों के लिए भी एक 'अलग किस्म' के स्कूल की शुरूआत हुई। नाम रखा गया 'अपारच्यूनिटी स्कूल'। इस स्कूल का खर्चा दान से चलता था, शायद आज भी दान से ही चलता है।

विजया रामाचन्द्रन जी......आज हम सब प्यार से उनको विजया दीदी कहते हैं। इनके पति यहॉ संस्थान में कार्यरत थे। दीदी और उनके जैसे अन्य कुछ संवेदनशील लोगों– शिरीष यादव, अमित नियोगी, ए.पी. शुक्ला– आदि ने मिलकर न सिर्फ इन गरीब बच्चों की अच्छी शिक्षा के लिये पहल की बल्कि तमाम दिहाडी मजदूरों के अधिकारों के लिए भी अपनी आवाज़ बुलन्द की। कुछ पुराने लोग बताते हैं कि विजया दीदी खुद अपने घर से अंकुरित चने और दाल लाकर बच्चों को खिलाया करती थीं, ताकि पढने के साथ ही उनकी पोषण संबंधी जरूरत भी पूरी हो सके।

बिहार,बंगाल,छत्तीसगढ और उडीसा के प्रवासी मजदूरों के अलावा बडी संख्या में आसपास के गॉव के लोग भी यहॉ मजदूरी करने आते हैं। आई.आई.टी. कैंपस को घेरने वाली उॅची चारदिवारी के उस पार ही इन लोगों के गॉव हैं। यूॅ लगता हैं जैसे ये चारदिवारी 'विकास' रूपी सीता मैया' को बाहर न जाने देने के लिए खीचीं गई लक्ष्मण रेखा हो। जमीन आसमान का फर्क हैं। दो अलग दुनिया बसती हैं– एक इस पार और दूसरी उस पार। यहॉ जगमग रोशनी है,अच्छी सडक है,बगीचे हैं,स्कूल हैं, अस्पताल हैं,सुरक्षा के पुख्ता इंतजाम हैं जबकि चारदिवारी के उस पार है–घुप्प अंधेरा।

बदलाव का दीपक जलाने वाले साथियों के कदम आई.आई.टी. कैंपस की चारदीवारी के बाहर बसे इन सभी गॉवों की ओर भी चल पडे, जिनके खेत आज इन बडी बडी इमारतों और प्रयोगशालाओं के नीचे ज़मीदोज़ हो चुके हैं। लोधर नाम के गॉव की झोपडी में लालटेन टिमटिमाई और कुछ बडे बुजर्गों को पढना लिखना सिखाने का काम शुरू हुआ। इसी झोपडी में दिन के समय बच्चों को भी पढाने का काम शुरू हुआ। आठवीं तक पढी हुई गॉव की एक लडकी आगे आई और वह रोज नियमित रूप से बच्चों को पढाने लगी। अगले कुछ वर्षों के दौरान आई.आई.टी कानपुर के कुछ शिक्षक तथा छात्रों ने इस स्कूल के विकास में बहुत ही सक्रिय योगदान दिया। कई पूर्णकालिक कर्मठ शिक्षकों की नियुक्ति हुई। आज यह स्कूल अपनी अच्छी शिक्षा के लिए जाना जाता है।

इधर कैंपस के भीतर, अपारच्यूनिटी स्कूल में पढ रहे बच्चे अपनी बहुत ही चुनौतीपूर्ण जिन्दगियों और माहौल के साथ आ रहे थें। उनके अभिभावक मजदूर थे और अपने बच्चों को पढने पढाने में वे बहुत मदद नही कर सकते थे।ऐसे में उन्हें स्कूल के समय के अलावा भी और मदद की जरूरत थी। आई.आई.टी के ही कुछ छात्र–छात्राएँ आगे आएं। उन्होने रोज शाम को दो घण्टा इन बच्चों को पढाना शुरू किया। बी.टेक ,एम.टेक व पी. एच.डी. करने वाले ये छात्र छात्राएँ तीन से पॉच साल ही यहॉ होते हैं। लेकिन अब सिलसिला बन चुका है,अतः नए नए लोग जुडते जाते हैं। रोज शाम को स्टूडेन्टस एक्टिविटि सेंटर के हॉल तथा कंम्पूटर कक्ष में आपको यही बच्चे गीत गाते तथा पढते लिखते मिलेगें। प्रत्येक चार पॉच बच्चों के समूह के बीच में एक छात्र या छात्रा बैठकर उनकी मदद कर रहे होते हैं।

एक मशाल जल जाने के बाद और मशालें जला पाना आसान होता है। ऐसा ही हुआ। आसपास के कुछ गॉवों में भी इन प्रयासों का असर हुआ। विजया दीदी,उनके साथियों और गॉव वालों के कदम आस पास मौजूद ईंट भटठों की तरफ भी बढ चले। जैसा मैने उपर कहा है, भटठों की चिमनियों के साये में एक पूरा गॉव बसा होता है। अनेक राज्यों से आए कई प्रवासी मजदूर अपने बाल बच्चों समेत यहॉ बसे होते हैं। पती पत्नी दिन भर हाड तोड मेहनत करते हैं। बहुत छोटा बच्चा दिनभर पेड की डाल से बंधे कपडे के झूले में पडा रोता रहता रहता है।

मॉ बीच बीच में अपना काम रोककर उसे दूध पिला आती है। उसका अपने बच्चे के पास ज्यादा देर रूकना संभव नही। ईंट कम बनी तो आज की मजदूरी भी कम मिलेगी। बच्चे, जो थोडा बडे हो चुके हैं वे अपने मॉ बाप के कामों में हाथ बॅटाते हैं। गधों की पीठ पर मिटटी या ईंट लादकर इधर से उधर पहॅुचाते हुए बच्चे प्रायः आपको हर ईंट भटठे पर दिख जाएगें। भटठा मालिक और उसके गुर्गों की इजाजत के बिना आप इन लोगों से मिलना तो क्या भटठे की सीमा में भी नही घुस सकते हैं।

विजया दीदी और उनके साथियों ने ईंट भटठों पर पल रहे बच्चों की शिक्षा के लिए पिछले कई वर्षों से लगातार संघर्ष किया है। उन्होने भटठा मालिकों के साथ तमाम मिटिगें की । उन्हें उनके भटठों पर दिन रात काम करने वाले मजदूरों के बच्चों के स्वास्थ्य तथा शिक्षा के बारे में सोचने को प्रेरित किया गया। कहीं मान मनौवल और कहीं सख्ती दिखाकर भटठों के भीतर बसी बस्ती में किसी तरह प्रवेश संभव हुआ। मजदूरों से संपर्क हुआ और उन्हें बच्चों को पढाने लिखाने की जरूरत समझाई गई। कुछ भटठों पर पेडों की छॉव में ही बच्चों की पाठशाला शुरू हुई। पास के गॉव से ही वालंटियर तलाशे गए और थोडे से प्रशिक्षण के बाद उनके सहयोग से यह काम शुरू हुआ। आपसी सहयोग तथा चंदे से खर्चे जुटाने का प्रयास भी जारी रहा। लोगों की लगन देख और लोक लाज के चलते भटठा मालिकों ने भी अपनी तरफ से कुछ मदद शुरू की। किसी ने टीन की छत डालकर बच्चों के बैठने का कमरा तैयार किया और किसी ने बच्चों को कापी कलम देने का खर्च उठाया।

दीदी खुद दिनभर इस भटठे से उस भटठे घूमती रहतीं। एक एक बच्चा और उनके माता पिता से मिलतीं। उन्हें पढाई लिखाई की अहमियत समझाती। कई बार कानपुर के भटठा मालिकों के एसोसिएशन के साथ मीटिंग की तथा उन्हें इस तरफ भी ध्यान देने का आग्रह किया। कुछ भटठों के मालिक तो इस कदर नाराज हुए कि दीदी और उनके साथियों के प्रवेश पर ही रोक–टोक करने लगे। कुछ ऐसे भी थे जो ' ऊंट के मुॅह में जीरा' बराबर मदद करके अपने हाथ पीछे खींच गए।मुहीम में जुटे साथी भी कम जीवट नही थे। वे लगातार संघर्षरत रहे। कई कई बार जिला कलेक्टर को चिटठी लिखी गई। कलेक्टर की उपस्थिति में भटठा मालिक एसोसिएशन के सदस्यों के साथ मीटिंग हुई। उन्हें तमाम श्रमिक कानूनों तथा बाल अधिकारों का हवाला देकर कुछ बुनियादी साधन उपलब्ध कराने के लिए राज़ी किया गया। इस तरह कुछ सकारात्मक माहौल बन पाया।

आज इतने बरसों के प्रयास से कानपुर और आसपास के इलाकों में तकरीबन 50 से अधिक भटठों पर अनौपचारिक शिक्षण केन्द्र चल रहे हैं। कानपुर में, लोधर गॉव में एक झोपडीं में शुरू हुआ 'स्वामी विवेकानन्द विद्यालय' आज गॉव तथा आसपास के 300 से अधिक बच्चों को आठवीं तक की अच्छी शिक्षा दे रहा है। यहॉ से कुछ किलोमीटर दूर ही 'धामीखेडा' नाम का पुराना गॉव है। कानपुर आवास विकास परिषद की आवास योजना के तहत यहॉ बडे पैमाने पर निर्माण कार्य चलता रहता है। विशेष रूप से निर्माण कार्य में लगे परिवारों के बच्चों के लिए इसी 'धामीखेड़ा' नाम के गॉव में एक विद्यालय संचालित किया जा चुका है।

प्रवासी मजदूरों के बच्चों की 12 वीं तक की शिक्षा संभव हो सके इसके लिए एक आवासीय हास्टल भी अब बनकर तैयार हो चुका है। बिहार, छत्तीसगढ और उत्तर प्रदेश के दूर दराज़ गॉवों के कई बच्चे यहॉ रहकर पढाई कर रहे हैं। ये बच्चे आपस में मिलकर गीत गाते हैं,नाचते हैं,नाटक करते हैं और एक दूसरे को सहयोग करते हुए पढाई करते हैं। पिछले कई सालों से दिन रात इन बच्चों के साथ रह रहे महेश भाई अपनी पहली खेप को तैयार होता देखकर बहुत खुश होते हैं। वे इन बच्चों के साथ तब से हैं जब ये बच्चे बहुत छोटे थें तथा प्राथमिक कक्षाओं में पढते थें। आज बच्चे बडे हो गए हैं। 10वीं तथा 12वीं में पढाई कर रहे हैं। बच्चे ही अपने हास्टल की सभी व्यवस्थाओं का संचालन करते हैं। खर्चों का लेखा जोखा रखने से लेकर छोटे बच्चों को होमवर्क कराने और उनका ख्याल रखने तक का काम ये लोग आपस में मिलकर ही करते हैं। शिक्षा ने इन्हें अपनी परिस्थितियों और अपने समाज के लोगों के प्रति और भी अधिक संवेदनशील बना दिया है। वे पढ लिख कर

अपने लोगों की बेहतरी के लिए काम करना चाहते हैं। अपने जीवन में जो बदलाव महसूस किया है उसकी तपिश अब वे दूसरे बच्चों तक भी पहुँचाना चाहते हैं।

विकास के रास्तों पर तेज़ रफतार दौड रही इस दुनियॉ में ईंट—गारे और मज़दूरों की जरूरत शायद कभी खत्म नही होने वाली है। इसके मायने ये हुए कि ये चिमनियॉ और इनकी जद में बसी जिन्दगियॉ हमे आगे भी बरसों बरस तक देखने को मिलती रहने वाली हैं। ऐसे में इनके और इनके बच्चों की बेहतरी के लिए सिर्फ विजया दीदी सरीखे लोगों द्वारा किये जा रहे प्रयास महत्वपूर्ण होते हुए भी नाकाफी हैं। आज जब यह कहा जा रहा है कि अच्छी शिक्षा प्राप्त करना हर बच्चे का अधिकार है, तो हम आप इस तरफ ऑखे मूँदकर नही बैठ सकते। इस तरह के काम व्यापक पैमाने पर किये जाने की बहुत जरूरत है। सरकार और समाज दोनो को आगे आना होगा।

मोहम्मद उमर